शक्ति सन्तुलन
(Balance of Power)

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा की स्थापना में शक्ति संतुलन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शक्ति संतुलन न केवल स्वतन्त्र राष्ट्र के पारस्परिक सम्बन्धों के निर्धारण व उनके संचालन में मुख्य भूमिका का निर्वहन करता है अपितु युद्धों की रोकथाम में भी निर्णायक होता है। शक्ति संतुलन के सिद्धान्त के अन्तर्गत विभिन्न राष्ट्र दो समूहों में बँध जाते हैं जिसमें कोई भी राष्ट्र इतना शक्तिशाली नहीं है कि वह दूसरों पर प्रभावी हो सके क्योंकि उसकी शक्ति विरोधी गुट से संतुलित हो जाती है। जैसे तुला के दो पलड़े समान भार होने पर संतुलित बने रहते हैं ठीक उसी प्रकार की साम्यावस्था विभिन्न राज्यों के मध्य सन्धियों द्वारा बनी रहती है। जब तक इस प्रकार का संतुलन कायम रहता है तब तक शान्ति स्थापित रहती है तथा छोटे-छोटे राष्ट्रों के हित सुरक्षित रहते हैं। किन्तु शक्ति में किसी भी प्रकार का उत्पन्न असंतुलन शान्ति व सुरक्षा के लिये संकट व चिन्ता का विषय बन जाता है। शान्ति व सुरक्षा की स्थापना में शक्ति संतुलन की महत्वपूर्ण भूमिका को दृष्टिगत रखकर **पामर** व **पार्किन्स** जैसे विद्वानों ने इसे "अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का एक बुनियादी सिद्धान्त" कहकर सम्बोधित किया है। यद्यपि कुछ आदर्शवादी चिन्तकों व विचारकों ने शक्ति का राजनीति से जुड़े होने के कारण शक्ति-संतुलन की निन्दा भी की है तथापि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इस सिद्धान्त को मान्यता मिली हुई है। वास्तव में, शक्ति संतुलन के उपयोग से अधिकतम लोगों को पर्याप्त लाभ मिलता है तथा शान्ति स्थापित रहती है। यही कारण है कि **एच० जे० मार्गेन्थो** ने शक्ति संतुलन को "एक व्यापक सामाजिक तत्व की अभिव्यक्ति"[1] कहकर सम्बोधित किया है।

शक्ति संतुलन का अर्थ

रिजर्ड कॉब्डेन ने शक्ति संतुलन के अर्थ पर दृष्टिपात करते हुये लिखा है कि यह एक विचित्र व उलझावपूर्ण शब्द है जो केवल भ्रमात्मक, मिथ्या-सत्य ही नहीं अपितु ऐसी अव्यक्त अस्पष्ट व्यवस्था का परिचायक है जिसकी कभी स्थापना ही नहीं की जा सकती है। इसके बावजूद विभिन्न विद्वानों ने शक्ति संतुलन को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है। संतुलन (Balance) शब्द के अर्थ को स्पष्ट करते हुये डॉ० महेन्द्र कुमार ने बताया कि यह शब्द सामान्य रूप से राष्ट्रों के मध्य शक्ति के वितरण का द्योतक है किन्तु कभी-कभी इसे शक्ति वितरण का पर्यायवाची और कभी एक देश से दूसरे की श्रेष्ठता का सूचक भी समझा जाता है जिसे अतिरिक्त शक्ति (Surplus power) कहा जा सकता है। किन्तु संतुलन शब्द का ठीक-ठीक अर्थ कोई भी नहीं जानता।[2] सामान्यतः यह शब्द कभी-कभी साम्यावस्था (Equilibrium) तथा कभी शेष के रूप में प्रयुक्त होता है। जैसा कि सर्वविदित है कि सतत् अधिकतम शक्ति प्राप्ति का प्रयत्न करते रहना ही राजनीति का सार-तत्व है तथा शक्ति की अति प्रबलता ही सभी राष्ट्रों का वास्तविक उद्देश्य व अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का आधार होती है। सुरक्षा व विकास हेतु शक्ति प्राप्ति की सतत् चेष्टा ही कहीं न कहीं राष्ट्रों को शक्ति-संतुलन स्थापना हेतु अभिप्रेरित करती है जिससे अतिरिक्त शक्ति प्राप्त करके वे अपने मार्मिक हितों की सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकें।

उक्त परिप्रेक्ष्य में शक्ति संतुलन के अर्थ को स्पष्ट करते हुये **कैसलरे** ने लिखा है कि, "राष्ट्र परिवार के सदस्यों के बीच ऐसी उचित साम्यावस्था बनाये रखना जिससे उनमें से कोई भी इतना ताकतवर न हो सके कि वह अपनी इच्छा दूसरों पर लाद सके।"[3]

Scanned by CamScanner

श्लीचर के अनुसार–"शक्ति संतुलन व्यक्तियों तथा समुदायों की सापेक्ष शक्ति की ओर संकेत करता है।"

क्लाड के शब्दों में–"शक्ति संतुलन एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें विभिन्न स्वतन्त्र राष्ट्र अपने आपसी शक्ति सम्बन्धों को बिना किसी बड़ी शक्ति के हस्तक्षेप के स्वतन्त्रतापूर्वक सचांलित करते हैं। इस प्रकार यह एक विकेन्द्रित व्यवस्था है जिसमें शक्ति नीति-निर्णायक इकाइयों के हाथों में ही रहती है।"

फे के शब्दों में–"शक्ति संतुलन का अर्थ है राष्ट्रों के परिवार के सदस्यों की शक्ति न्यायपूर्ण तुल्यभारिता जो किसी राष्ट्र को दूसरे राष्ट्र पर अपनी इच्छा लादने से रोक सके।"

इसी प्रकार **क्वींसी राइट** ने शक्ति संतुलन के अर्थ को निम्नवत स्पष्ट किया है–

"The term balance of power implies that changes in relative political power can be observed and measured."[4]

George Schwarzenberger ने शक्ति संतुलन को 'साम्यावस्था' (Equilibrium) अथवा "अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक प्रमुख स्थायित्व का परिमाण" (A certain amount of stability in international relations) कहकर सम्बोधित किया है। जहाँ एक ओर **डिकिन्सन** ने संतुलन शब्द का प्रयोग समानता एवं असमानता दोनों ही अर्थों में किया है वहीं प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ **फेनलान** ने शक्ति संतुलन को बहुत ही स्पष्ट सिद्धान्त मानते हुये बताया है कि इसका लक्ष्य अपने पड़ोसी राष्ट्र को कभी भी इतना शक्तिशाली नहीं बनने देना होता है कि वह भय का कारण बन जाये। मार्गेनथो, चर्चिल व कैनेथ टॉमसन जैसे विद्वानों ने जहाँ एक ओर शक्ति के समान वितरण की अवधारणा को शक्ति संतुलन की संज्ञा देते हुये यह स्पष्ट किया है कि असंतुलन शक्ति शान्ति व सुरक्षा के लिये खतरे का द्योतक होती है वही मार्टिन वाइट, ए० पी० जे० टेलर व चार्ल्स लर्च जैसे विद्वानों ने शक्ति संतुलन को एक निकाय (system) की संज्ञा दी है। इतना ही नहीं, बहुत से लेखकों ने शक्ति संतुलन को अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के यर्थाथवाद का प्रतीक मानते हुये स्पष्ट किया है कि शक्ति संतुलन की अवहेलना से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शक्तिकारक की उपेक्षा होती है। इस संदर्भ में **मिल** व **चार्ल्स** का निम्नलिखित कथन उल्लेखनीय है–

"A country ignoring the balance of power is to remain poorly armed, without allies and with no attempt to balance the power of the aggressor state."[5]

शक्ति संतुलन की उपरोक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि यह अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की एक ऐसी स्थिति है जिसके अन्तर्गत शक्ति का समान वितरण करके विश्व-शान्ति व सुरक्षा को स्थायित्व देने के उद्देश्य निहित होते हैं। अर्नेस्ट हॉस ने शक्ति संतुलन के आठ अर्थ बताये हैं, जो निम्नवत हैं–

1. शक्ति का वितरण (Distribution of Power)
2. शक्ति की साम्यावस्था (Equilibrium of Power)
3. शक्ति की प्रबलता (Hegemony of Power)
4. स्थिरता एवं शान्ति (Stability and Peace)
5. अस्थिरता एवं युद्ध (Instability and War)
6. शक्ति राजनीति (Power Politics)
7. एक सार्वभौमिक सिद्धान्त (An Universal Law)
8. एक व्यवस्था तथा नीति निर्माताओं के लिये मार्गदर्शक (A System and guide to policy making)।

जबकि एच० जे० मार्गेन्थो ने शक्ति संतुलन के चार स्वरूपों का उल्लेख निम्नवत किया है–

Scanned by CamScanner

1. राज्यों में शक्ति वितरण पर बल देने वाली नीति।

2. विश्व राजनीति के यथार्थवादी स्वरूप का चित्रण करने वाला सिद्धान्त।

3. शक्ति का समान वितरण।

4. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में राजनीतिक शक्ति वितरण को स्पष्ट करने वाली शब्दावली।

शक्ति संतुलन की इस विविधता के कारण ही कभी भी राष्ट्र यह कहने में जरा सा संकोच नहीं करते हैं कि उनकी विदेश नीति शक्ति संतुलन को ध्यान में रखकर निर्धारित की गयी है। जो भी हो, यह निर्विवाद सत्य है कि विश्व में शान्ति की स्थापना एवं छोटे-छोटे राष्ट्रों के हितों की सुरक्षा में शक्ति संतुलन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शक्ति-संतुलन स्थापित होने पर कोई भी पक्ष आक्रमण का जोखिम नहीं उठाता जबकि इसकी अवहेलना अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति को संकटापन्न कर देती है।

शक्ति संतुलन के प्रकार

शक्ति संतुलन दो प्रकार के होते हैं–

1. सरल शक्ति संतुलन–जब शक्ति मुख्यतः दो राष्ट्रों अथवा दो विरोधी गुटों में केन्द्रित होती है तब उसे सरल शक्ति संतुलन कहा जाता है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अमेरिका व पूर्व सोवियत संघ के मध्य स्थापित संतुलन इसी श्रेणी में आता है।

2. बहुमुखी शक्ति संतुलन–इस प्रकार के संतुलन में राष्ट्र या राष्ट्र समूह एक दूसरे को संतुलित करते हैं और पुनः इसके अन्तर्गत संतुलन होता है। लेकिन जब शक्ति के लिये संघर्ष प्रारम्भ होता है तब सभी राष्ट्र संघर्षरत दो पक्षों में से किसी एक पक्ष के साथ मिलने की कोशिश करते हैं।

शक्ति संतुलन के मूल

शक्ति के विभिन्न अर्थ होते हुये भी इसकी कुछ मूलभूत मान्यतायें (Assumptions) होती हैं। **क्वींसी राइट** ने शक्ति संतुलन के मूल रूप से पाँच अभिग्रह बताये हैं, जो निम्नवत हैं[6]–

1. प्रत्येक राष्ट्र अपने मार्मिक हितों की सुरक्षा हेतु सतत् प्रतिबद्ध रहता है तथा इसके लिये वह युद्ध सहित हर सम्भव उपायों का प्रयोग करता है। यद्यपि मार्मिक हितों का निर्धारण एवं उसकी रक्षा हेतु विभिन्न साधनों का निश्चय प्रत्येक राष्ट्र अपने ढंग से करता है तथापि इसके अन्तर्गत मूल रूप से स्वाधीनता, क्षेत्रीय अखण्डता, सुरक्षा, घरेलू, आर्थिक और राजनैतिक प्रणाली तथा जीवन पद्धति का संरक्षण और समुद्रों की स्वतन्त्रता के अधिकार जैसे विषय सम्मिलित होते हैं।

2. यद्यपि प्रत्येक देश के राष्ट्रीय हितों को खतरा तो अवश्य बना रहता है किन्तु यदि उनके समक्ष किसी भी प्रकार के खतरे नहीं हैं तो उन्हें कोई ठोस कदम उठाने की आवश्यकता नहीं होती है। राष्ट्रीय हितों के अन्तर्गत क्षेत्रीय अखण्डता, स्वतन्त्रता तथा राजनीतिक व गृह नीतियाँ सम्मिलित होती हैं जिनकी सुरक्षा राष्ट्र के अस्तित्व के लिये अनिवार्य है।

3. कोई भी देश दूसरे देश के विरुद्ध आक्रमण की पहल उसी स्थिति में करता है जब उसकी शक्ति विरोधी की अपेक्षा अधिक होती है।

4. राष्ट्रों की शक्ति का काफी हद तक सही-सही अनुमान लगाया जा सकता है और शक्ति का प्रयोग विश्व के प्रमुख राजनैतिक तत्वों को अपने अनुकूल बनाने में किया जा सकता है।

5. विदेश नीति सम्बन्धी कोई भी निर्णय शक्ति को ध्यान में रखकर पर्याप्त सावधानी से किया जाना चाहिये। राजनीतिज्ञों के पास राष्ट्र के मार्मिक हितों की पहचान करने एवं अन्य राष्ट्र की क्षमताओं का आंकलन करने के साथ-साथ इरादों का निश्चय कर सकने की अद्भुत क्षमता भी होनी चाहिये। सन् 1933 में जर्मनी में

Scanned by CamScanner

सत्तारूढ़ होने पर हिटलर द्वारा अपनी राष्ट्रीय शक्ति की अभिवृद्धि हेतु उठाये गये विभिन्न कूटनीति व सामरिक कदम इसके उदाहरण हैं।

शक्ति संतुलन स्थापित करने की विधियाँ

अन्तर्राष्ट्रीय इतिहास के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि राज्य शक्ति-संतुलन की नीति का अनुपालन किसी न किसी रूप में अवश्य करते हैं। शक्ति-संतुलन हेतु राज्य निम्नलिखित विधियाँ अपनाते हैं–

1. सन्धियों की स्थापना–शक्ति सन्तुलन को बनाये रखने में सन्धियों का महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि जैसे ही कोई राष्ट्र शक्तिशाली होकर शक्ति सन्तुलन के लिये खतरा उत्पन्न करने का प्रयास करता है, तुरन्त ही उसके विरुद्ध कई राष्ट्र मिलकर एक सन्धि बना लेते हैं जिनका उद्देश्य सन्तुलन को तोड़ने वाली शक्ति के विरुद्ध ठोस कार्यवाहियाँ (युद्ध सहित) करना होता है। सन्धि में शामिल होने वाले सभी देश अपने-अपने हितों को देखकर अपनी सुरक्षा हेतु ही सन्धियों में शामिल होते हैं।

सन्धियाँ आक्रामक (Offensive) व प्रतिरक्षात्मक (Defensive) स्वरूप की होती है। इन सन्धियों का उद्देश्य विश्व-शक्ति सन्तुलन अथवा क्षेत्रीय सन्तुलन को बनाये रखना होता है। लेकिन इनकी सफलता का प्रमुख आधार राष्ट्रों को मित्रों के चुनाव करने में मिली स्वतन्त्रता है। यदि यह स्वतन्त्रता नहीं होगी तो न सन्धियाँ गठित होंगी और न ही शक्ति सन्तुलन सफल होगा।

2. अधिकाधिक क्षेत्रों पर अधिकार करना–इसके अन्तर्गत प्रत्येक राष्ट्र अपनी शक्ति में वृद्धि हेतु अपना क्षेत्रीय विस्तार करता है। यह कार्य उस समय काफी सरल होता है जब दूसरा पक्ष ऐसा कार्य न कर रहा हो।इस कार्य के अन्तर्गत कभी-कभी शक्तिशाली राष्ट्र को अपने प्रतिद्वन्द्वी देशों को भी कुछ हिस्सा देना पड़ता है। पोलैण्ड के विभाजन में आस्ट्रिया की रूस के साथ मिलकर लाभ प्राप्त करने की कार्यवाही इसका प्रमाण है।

3. अन्तस्थ (बफर) राज्य की स्थापना–इसके अन्तर्गत ऐसे बफर राज्य की स्थापना के प्रयास किये जाते हैं जो दो बड़े शत्रुओं के मध्य युद्ध की सम्भावनाओं को कम करते रहें। प्रथम महायुद्ध के पूर्व जर्मनी व रूस के मध्य पोलैण्ड, फ्रांस व जर्मनी के मध्य बेल्जियम व हालैण्ड ऐसे ही बफर राज्य थें, लेकिन यह भी सम्भव है कि दो शक्तिशाली शत्रु देश बफर के बराबर क्षेत्र पर अधिकार करके उसके अस्तित्व को ही समाप्त कर दें। जर्मनी, कोरिया व वियतनाम इसी प्रक्रिया के परिणाम हैं।

4. शस्त्रास्त्रों का भण्डारण–युद्ध को राष्ट्रों के भाग्य का निर्णायक मानकर प्रत्येक देश अपने शस्त्रागरों को नवीनतम हथियारों से भरने हेतु शस्त्रीकरण का कार्य करता है, जिसके फलस्वरूप अन्य शक्तियाँ भी शस्त्रीकरण की दौड़ में भाग लेने के लिये बाध्य हो जाती हैं। सामरिक श्रेष्ठता प्राप्त करने के उद्देश्य से अमेरिका व रूस के मध्य शस्त्रीकरण की दौड़ इसका उदाहरण हैं।

5. हस्तक्षेप–अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा एवं नीतियों की सफलता हेतु प्रत्येक राष्ट्र नये-नये मित्र राष्ट्रों की तलाश में प्रयत्नरत रहता है। कमजोर राष्ट्रों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करके अपनी समर्थक सरकार स्थापित करने का कार्य इसी श्रेणी में आता है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ब्रिटेन ने जोर्डन में, अमेरिका ने ग्वाटेमाला, क्यूबा, लेबनान, लाओस, कम्बोडिया और वियतनाम में तथा सोवियत संघ ने पूर्वी जर्मनी, चेकोस्लोवाकिया एवं अफगानिस्तान में हस्तक्षेप करके यह सिद्ध कर दिया है कि वे अपने प्रभुत्व व शक्ति को चुनौती देने वाली शक्तियों को संतुलित करने हेतु हस्तक्षेप जैसे कदम उठाने में शिथिलता नहीं आने देंगे। इन सभी हस्तक्षेपों में हस्तक्षेपकर्त्ता राष्ट्रों ने अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति को प्राथमिकता देकर अन्य राष्ट्रों के हितों को तिलांजलि देने में जरा सा भी संकोच नहीं किया।

6. क्षतिपूर्ति–क्षतिपूर्ति का तात्पर्य अन्तर्राष्ट्रीय तुल्यभारिता को बनाये रखने हेतु किसी राष्ट्र को उतना ही देने की नीति से है कि बाद में उससे प्राप्त करने में कोई कठिनाई न हो। युद्धों की समाप्ति के पश्चात् शान्ति सन्धियों के अन्तर्गत इसी सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुये राज्यों द्वारा भू-क्षेत्रों के आदान-प्रदान कर सीमाओं में

Scanned by CamScanner

परिवर्तन किया जाता है जिससे उनकी तुलनात्मक शक्ति की यथास्थिति बनी रहे। सन् 1713 में यूट्रेक्ट सन्धि द्वारा स्पेन अधिकृत क्षेत्र का विभाजन तथा पोलैण्ड का तीन बार विभाजन (सन् 1772, 1793 एवं 1795) इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। इसी प्रकार सन् 1906 में इथियोपिया का ब्रिटेन, इटली व फ्रांस द्वारा किया गया विभाजन भी इसका उदाहरण है जब विभाजनकर्त्ता राष्ट्रों ने उसे समान प्रभाव क्षेत्रों में बाँट दिया था। भू-भागों का यह विभाजन करते समय क्षेत्रफल, भूमि की उर्वरता, औद्योगिक क्षमता एवं साधनों की प्रचुरता का विशेष ध्यान रखा जाता है। **मार्गेन्थो** ने इस संदर्भ में यह कहा भी है कि, "राजनैतिक समझौते को जन्म देने वाली राजनैतिक वार्ताओं की सौदेबाजी भी अपने सामान्य रूप में क्षतिपूर्ति का सिद्धान्त ही है, और इस प्रकार यह शक्ति संतुलन का ही अंग है।"

7. विभाजन एवं शासन–शक्ति संतुलन की स्थापना हेतु राज्य अपने शत्रु तथा उनके मित्र राष्ट्रों में फूट डालकर उनकी शक्ति क्षीण करने की भी कोशिश करते हैं। 17वीं शताब्दी से द्वितीय महायुद्ध तक फ्रांस की विदेशनीति की यह प्रमुख नीति रही है। इसी प्रकार सोवियत संघ ने भी सन् 1910 से 1929 तथा इसके बाद भी यूरोपीय राष्ट्रों के मध्य फूट डालकर अपनी शक्ति सुदृढ़ करने की नीति का अनुपालन किया।

शक्ति संतुलन की स्थापना हेतु उक्त विधियों के अतिरिक्त विरोधी पक्ष के मित्रों को उससे पृथक कर शत्रु-शक्ति को क्षीण करने की नीति तो अपनायी जाती ही है साथ ही शत्रु के मित्रों को तटस्थ रहने अथवा उन्हें अपना मित्र बनाने के भी कूटनीतिक प्रयत्न किये जाते हैं। ब्रिटेन द्वारा अपने उपनिवेशों में ऐसी नीति के क्रियान्वयन के कई उदाहरण मिलते हैं। सोवियत संघ द्वारा ब्रिटेन व फ्रांस को अमेरिकी मित्र-मंडल से पृथक करने तथा कई प्रमुख गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों को अपने पक्ष में करने के उपाय इसी श्रेणी में आते हैं।

शक्ति संतुलन की अवधारणा का ऐतिहासिक विकास

यद्यपि शक्ति संतुलन सिद्धान्त का आरम्भ वास्तविक अर्थों में 15वीं शताब्दी से माना जाता है तथापि प्राचीन काल में यूनान के नगर राज्यों की व्यवस्था के अतिरिक्त मिस्र, बेबीलोन, चीन तथा भारत की राज्य प्रणालियों में शक्ति संतुलन सिद्धान्तों के स्वरूप को स्पष्टतः देखा जा सकता है। भारत के हिन्दू शासकों की नीतियों में तथा कौटिल्य द्वारा वर्णित विदेशनीति व मण्डल सिद्धान्तों में शक्ति संतुलन की अवधारणा निहित थी।

मैक्यावेली ने अपने ग्रन्थ प्रिंस में भी शक्ति सन्तुलन की ओर संकेत किया है तथा 'वेनिस' नामक नगर द्वारा संतुलनकर्त्ता की भूमिका का निर्वहन करने के प्रमाण भी उपलब्ध हैं। सोलहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड ने शक्ति-संतुलन की कूटनीति का प्रयोग करके फ्रांस व पवित्र रोमन साम्राज्य के मध्य संतुलन बनाये रखने का सक्रिय प्रयास किया। यह बात और है कि इंग्लैण्ड ने इस अवधि में कमजोर पक्ष की तुलना में शक्तिशाली पक्ष का ही समर्थन किया। सन् 1648 में सम्पन्न वेस्टफालिया सन्धि के पश्चात् शक्ति-संतुलन की सार्थकता स्पष्टतः परिलक्षित होने लगी। यही कारण था कि फ्रांस के लुई चौदहवें द्वारा अपनी स्थल व नौ-शक्ति के विस्तार हेतु उठाये गये विभिन्न कदमों का इंग्लैण्ड व नीदरलैण्ड ने संयुक्त रूप से विरोध किया। यह प्रतिक्रिया फ्रांस द्वारा शक्ति-संतुलन के अस्तित्व को दी जा रही चुनौतियों का ही परिणाम थी। इसी प्रकार 17वीं शताब्दी के अन्तिम काल में स्वीडन द्वारा बाल्टिक सागर के निकटवर्ती राष्ट्रों को चुनौती देने के परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में भी शक्ति संतुलन की प्रक्रिया का सूत्रपात हुआ।

किन्तु 18वीं शताब्दी में सन् 1713 की यूट्रेक्ट सन्धि से पोलैण्ड के विभाजन (सन् 1722) तक के काल को शक्ति-संतुलन अवधारणा के विकास का स्वर्ण युग माना जाता है। इस कालावधि में यूरोप के राज्यों द्वारा न केवल विदेश नीति के संचालन में शक्ति- संतुलन अवधारणा का मार्ग-दर्शक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लिया गया अपितु इससे सम्बन्धित साहित्यों की उपलब्धता से यह प्रक्रिया शनैः-शनैः सुदृढ़ होती गयी। प्रशा के सम्राट फ्रेडरिक महान को शक्ति संतुलन की स्थापना का प्रमुख कलाकार कहा जाता है जिसने यूरोप में हुये पोलैण्ड के विभाजन के समय अपनी अद्भुत कुटनीतिक कुशलता का उदाहरण प्रस्तुत किया। प्रशा की

Scanned by CamScanner

शक्ति को संतुलन करने के उद्देश्य से आगे चलकर जर्मन शक्ति का उदय हुआ जिससे यूरोपीय शक्ति-संतुलन अप्रभावित न रह सका। उन्नीसवीं शताब्दी में नैपोलियन बोनापार्ट के अद्भुत सामरिक सामर्थ्य ने यूरोप के शक्ति संतुलन को सर्वाधिक प्रभावित किया। फलस्वरूप, ब्रिटेन ने उसकी चुनौती का सामना करने के उद्देश्य से सन् 1815 में वियना-कांग्रेस के माध्यम से नवीन शक्ति-संतुलन की स्थापना की। ठीक इसी तरह रूस द्वारा टर्की की शिथिलता का लाभ उठाकर बाल्कन प्रायद्वीप में किये गये हस्तक्षेप के प्रतिक्रियास्वरूप फ्रांस, आस्ट्रिया व ब्रिटेन ने संयुक्त रूप से टर्की का पक्ष लेकर संतुलन स्थापित करने का सफल प्रयास किया।

प्रथम व द्वितीय महायुद्ध में भी शक्ति संतुलन के उदाहरण दृष्टिगत होते हैं। जहाँ एक ओर प्रथम महायुद्ध में ब्रिटेन, फ्रांस व रूस द्वारा जर्मन व आस्ट्रिया की शक्ति को संतुलित करने हेतु गठबन्धन किये गये वहीं द्वितीय महायुद्ध में धुरी शक्तियों (Axis Power) को संतुलित करने हेतु विभिन्न राजनैतिक व सामरिक विभेदों के बावजूद सोवियत संघ व अमेरिका को भी मित्र राष्ट्रों के गठबन्धन में सम्मिलित होना पड़ा। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् महाशक्तियों के मध्य प्रारम्भ शीत युद्ध के वातावरण में एक-दूसरे के प्रभाव-प्रसार पर अंकुश लगाकर शक्ति-संतुलन बनाये रखने के उद्देश्य से सैन्य संगठनों की बाढ़ सी आ गयी। नाटो, सीटो, सैण्टो एवं वारसा सैन्य संगठन इसी शक्ति-राजनीति की उपज थे। समाजवाद व पूँजीवाद की दो विचारधाराओं में विभक्त विश्व में चल रही स्पर्धा के इसी काल में गुटनिरपेक्षता की विचारधारा उत्पन्न हुई। बाद में सोवियत चीन संघर्ष, जर्मनी व जापान की शक्ति में अद्भुत वृद्धि, चीन की बढ़ती सैन्य शक्ति एवं फ्रांस तथा पाकिस्तान द्वारा नाटो व सीटो से पृथक रहने की भूमिकाओं के कारण द्विध्रुवीय विश्व राजनीतिक प्रणाली शनैः-शनैः शिथिल पड़ने लगी। अन्ततोगत्वा, सोवियत विघटन के बाद विश्व राजनीति व शक्ति-संतुलन का सम्पूर्ण ढाँचा ही परिवर्तित हो गया।

शक्ति संतुलन की उपयोगिता

शक्ति संतुलन का मूल उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति व सुरक्षा की स्थापना करके विश्व में स्थिरता का वातावरण उत्पन्न करना होता है। डा० महेन्द्र कुमार ने शक्ति संतुलन के मुख्यतः दो उद्देश्य बताये हैं।[7]

1. छोटे राष्ट्रों की स्वाधीनता की सुरक्षा–प्रायः यह स्वीकार किया जाता है कि छोटे राष्ट्र पृथक रूप से बड़े राष्ट्रों के साथ संतुलन स्थापित करने में सक्षम नहीं हो सकते। इसीलिये उनके सामने एक ही मार्ग होता है कि वे ऐसी स्थितियों का निर्माण करें जिसमें बड़े राष्ट्र उनकी सुरक्षा समस्याओं में सहायक हो सके। यही भावनायें मूल रूप से शक्ति संतुलन की स्थापना हेतु अभिप्रेरित करती हैं। मैत्री सन्धियों का गठन अथवा संश्रय की तकनीक इन्हीं उद्देश्यों का परिणाम होती है। इतना ही नहीं, छोटे राष्ट्रों में यह भी भावना कार्य करती है कि वे स्वयं को बड़े राष्ट्रों से जोड़कर अपनी शक्ति में अभिवृद्धि व शक्ति संग्रह सफलता से कर सकते हैं। **डॉ० महेन्द्र कुमार** के शब्दों में, "जब यह दावा किया जाता है कि शक्ति संतुलन से छोटे राज्यों की आजादी सुनिश्चित हो जाती है तो इसका अर्थ सम्भवतः यह होता है कि शक्ति संतुलन तन्त्र में कमजोर व छोटे राज्यों को अपनी सुरक्षा नीतियों के लिये एक विशेष आधार प्राप्त होता है।"[8]

2. अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति का पोषण–अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के इतिहास में ऐसे अनेकों दृष्टान्त उपलब्ध हैं कि शक्ति संतुलन सिद्धान्त ने अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की स्थापना एवं उसके पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। इसके बावजूद विद्वानों में इस बात पर पर्याप्त मतभेद है कि किसी काल विशेष में यह सिद्धान्त सर्वाधिक सफल रहा है। जहाँ एक ओर **जॉन हर्ज** व **अर्न्स्ट हॉस** जैसे विद्वानों ने 18वीं शताब्दी को शक्ति संतुलन की दृष्टि से सर्वाधिक सफल माना है वहीं **हेनरी किसिंजर** ने 19वीं शताब्दी को इस दृष्टि से उल्लेखनीय कहा है। परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अधिकांश विशेषज्ञों ने नैपोलियन युद्धों के अन्त और

Scanned by CamScanner

प्रथम महायुद्ध के प्रारम्भ के मध्य के समय (सन् 1815 से 1914 तक) को अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति की दृष्टि से बार-बार उद्धृत किया है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री **हेराल्ड मैकमिलन** ने सन् 1958 में कहा था कि, "सन् 1815 से 1914 तक प्रायः निरन्तर शान्ति बनी रही।" प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता **फेरो** ने इस पर प्रकाश डालते हुये बताया है कि, "19वीं शताब्दी में यूरोप में युद्ध तो बहुत बार हुये पर शक्ति संतुलन तन्त्र ने उन युद्धों को स्थानबद्ध व सीमित रखा।" **ई० एच० कार** ने भी बताया है कि 19वीं शताब्दी में यूरोप में शक्ति संतुलन तन्त्र के कारण शान्ति की स्थापना में पर्याप्त सहयोग व सहायता मिली।

दूसरी ओर **डॉ० महेन्द्र कुमार** का दृढ़ मत है कि सन् 1815 से 1914 की अवधि में शान्ति शक्ति संतुलन के कारण नहीं अपितु ब्रिटिश शक्ति की अतिप्रबलता के कारण स्थापित थी। वास्तव में, इस अवधि में शक्ति संतुलन का उद्देश्य शान्ति स्थापित करना नहीं अपितु ऐसी मैत्री सन्धियाँ करना था जिनके द्वारा अन्य मित्र-मंडलों की शक्ति-वृद्धि पर अंकुश लगाना अपेक्षाकृत सरल हो सके। प्रथम महायुद्ध से भी शक्ति संतुलन की स्थापना में सहायता नहीं मिली। यद्यपि दोनों महायुद्धों के बीच (1918-1939) मित्र राष्ट्रों की शक्ति अधिक होने से शान्ति बनी रही किन्तु बाद में जर्मन शक्ति में हुई अद्भुत वृद्धि के मित्र राष्ट्रों के समक्ष चुनौती उत्पन्न करके अन्ततः द्वितीय महायुद्ध का पथ प्रशस्त कर दिया।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् सोवियत संघ व संयुक्त राज्य अमेरिका के महाशक्ति के रूप में हुये उदय व दोनों के पास परमाणु शक्ति सम्पन्नता से विश्व का प्रत्यक्षतः दो क्षेत्रों में विभक्त होना शक्ति संतुलन की दृष्टि से महत्वपूर्ण घटना रही है। नाटो, सीटो, सेण्टो व वारसा जैसी सन्धियाँ एक-दूसरे की शक्ति को संतुलित करने की नीति का ही परिणाम थीं। किन्तु बाद में परमाणु हथियारों के प्रसार, सामूहिक विनाश के भय एवं फ्रांस, चीन व जर्मनी आदि राष्ट्रों द्वारा शीत युद्ध काल में दोनों ही गुटों को दी गयी चुनौतियों से यह संतुलन धीरे-धीरे शिथिल पड़ने लगा जिसमें गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ❐

Scanned by CamScanner